कमल लाड, पी एम लाड व एलेक्स एम. जॉर्ज

बर्फ की सड़कें, पशमीना, लोस्सार...

लद्दाख की यादें

लद्दाख कई मामलों में बिल्कुल अलग है। खास है। जैसे यहाँ का आसमान लगभग पूरे साल नीला बना रहता है। हमारे देश में ऐसी दूसरी जगह कहाँ है? कभी-कभार ही कोई बादल यहाँ किसी बादल से बातें करता या उसका पीछा करता दिखता है। और बारिश! बारिश तो नहीं के बराबर होती है। वो जो ऊँचा हिमालय है न वो सारे बादल दूसरी तरफ ही रोक लेता है। यहाँ बादल आ ही नहीं पाते हैं तो भला बारिश कहाँ से आएगी। हाँ, बर्फ ज़रूर गिरती है। फरवरी के बाद के महीनों से बर्फ पिछलना शुरू होती है। इससे छोटे झरने पानी से भर जाते हैं। सितम्बर-अक्टूबर तक यही झरने, नदियाँ और झरने पानी का स्रोत होती हैं। बर्फ पिघलने के बाद ही खेती-बाड़ी हो पाती है।

बे-बादल आसमान में शाम को सूरज ढलते समय रोशनी का जो मन को भाने वाला शो होता है उसका क्या कहना। चारों ओर की पहाड़ियाँ सुन्दर रंगों से रंग जाती हैं। कुछ वैसे ही जैसे ढलती शाल को समुद्र के किनारे रंग दिखते हैं!!! और फिर लद्दाख की उन दो बड़ी नदियों – सिन्धु और श्योक – और झीलों को कौन भूल सकता है। नूब्रा और जस्कार जैसी छोटी नदियों के भी क्या कहने। लोगों के जीवन में दो बड़ी झीलों का खासा महत्व है। खासतौर पर उस झील का

याक

1 ब्ल्यू शीप - इनकी देखने, सूँघने और सुनने की क्षमता काफी विकसित होती है। पश्चिमी हिस्से को छोड़कर ये पूरे लद्दाख में मिलते हैं। 3500-5100 मीटर की ऊँचाई में रहती हैं।

2 रेड बिल्ड चोघ - यह लद्दाखी कौआ है। गर्मियों में यह 4200 मीटर से भी ऊँचाई तक चला जाता है और सर्दियों में 3800 मीटर तक उतर आता है। इसका प्रिय भोजन है छोटे कीड़े।

3 चोकर - अनाज, सब्ज़ियाँ, कीड़े, कन्द, तने जो मिले ये खा लेते हैं। लगभग पूरे लद्दाख में 4200 मीटर से नीचे इन्हें देखा जा सकता है। एकदम सुबह और देर शाम को ये बड़े पत्थरों के पास खड़े होकर चुक-चुक-चुक की तेज़ आवाज़ निकालते हैं। यह उनका दूसरों को अपना इलाका बताने का एक तरीका है।

4 ब्लैक बिल्ड मैग्पाई - शायद इसे ऊँचाई पसन्द है। तभी तो 4000-4500 मीटर से ज़्यादा ऊँचाई पर ही ये दिखाई देते हैं। ये पॉप्लर पेड़ों पर तने और शाख के बीच में टहनियों, मिट्टी, घास आदि से बड़ा-गोल-सा घोंसला बनाते हैं। एक ही घोंसले को वे सालों तक इस्तेमाल करते हैं।

5 दुनिया में ऐसी जगहें अब कम ही हैं जहाँ हिम तेन्दुए बचे हैं। लद्दाख इनमें से एक है। लेकिन अब यहाँ भी इनकी संख्या तेज़ी से कम होती जा रही है - एक तो उनके फर की माँग के कारण उनका शिकार हो रहा है और दूसरे, मवेशियों को खा जाने के कारण लोग इन्हें मार डालते हैं। अब यहाँ मुश्किल से 200 हिम तेन्दुए बचे हैं। लद्दाख का दूरदराज इलाके में होना इनके अब तक बचे रहने का एक कारण था लेकिन अब यही इनके खत्म होने का भी कारण बनता जा रहा है।

6 मर्मोट - गिलहरी परिवार का सबसे बड़ा सदस्य। यह घास और पौधे आदि खाता है। पूरी गर्मियों सुबह से शाम तक खाता रहता है। और पूरी सर्दियाँ बिल में घुसा रहता है। सर्दियों के खत्म होते-होते इनका वज़न आधा रह जाता है।

नर ब्ल्यू शीप 1

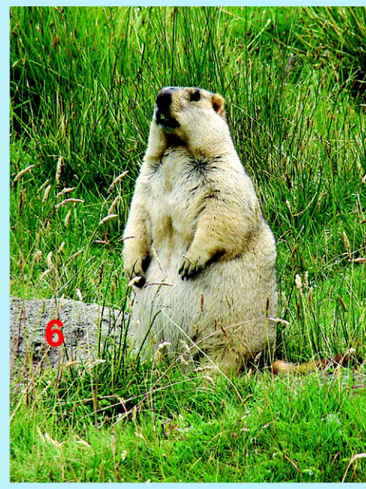
6

2

4

3

1 मादा ब्ल्यू शीप

5

जो चीन की सीमा के पास है – पैंगांग सो। इस झील से नमक प्राप्त होता है। लद्दाख के दूसरे हिस्सों में रहने वाले यहाँ दूसरी चीज़ें देकर नमक ले जाते हैं। पैंगांग सो के आसपास का इलाका चंगतांग कहलाता है। यहाँ खेती-बाड़ी नहीं होती। लोग खानाबदोश जीवन जीते हैं।

सर्दियाँ लद्दाख को बदल कर रख देती है। नदियाँ बर्फ की सड़कें बन जाती हैं। 13-14 हज़ार फुट की ऊँचाई पर रहने वाले लगभग 8-9 हज़ार फुट तक नीचे उतर आते हैं। भारी हिमपात होता है। सड़कें बन्द हो जाती हैं। नवम्बर से फरवरी तक के चार महीने लद्दाख पूरी दुनिया से कटा रहता है। पहाड़ों को पार करना असम्भव हो जाता है।

यहाँ की पश्मीना भेड़ बड़ी मशहूर हैं। पश्मीना की खासियत है इसका महीन रेशा। इतना महीन की एक पूरी की पूरी शॉल एक अँगूठी के अन्दर से निकल जाती है। ये शॉलें तो ज़्यादातर कश्मीर में बुनी जाती हैं पर पश्मीना ऊन वाली खास भेड़ें चांगतांग में ही पाली जाती हैं। बसन्त में इन भेड़ों की ऊन झड़ जाती है जो सर्दियों तक वापस उग आती है।

लद्दाखियों का सबसे खास त्यौहार है – लोस्सार। यह उनका नए साल के स्वागत का त्यौहार है। इसे आमतौर पर दिसम्बर महीने के आखिरी हफ्ते में मनाते हैं। इसके अलावा और भी कई त्यौहार हैं जो बड़े बौद्ध मठों में मनाए जाते हैं। हेमिस मठ यहाँ का सबसे समृद्ध मठ है। 400 साल पुराना है यह। यहाँ बौद्ध भिक्षुओं को प्रशिक्षित किया जाता है। यह त्यौहार गुर रिमपोच (या पद्मसम्भव) को समर्पित है। इन्हें महात्मा बुद्ध का अवतार माना जाता है। और यह भी कि इनका जन्म लोगों को पाप से बचाने के लिए हुआ था। मठ के सामने के मैदान में मुखौटा नाच होता है। यहाँ एक पवित्र खम्बा गाड़ा जाता है। एक तरफ बने मंच पर कपों में पवित्र पानी, कच्चा चावल आदि रखा जाता है। संगीतकार संगीत बजा रहे होते हैं। इसका मुख्य आकर्षण 3 मीटर लम्बा बिगुल होता है।

लद्दाख के घर

जहाँ इतनी ठण्ड पड़ती है, बर्फबारी होती है और जहाँ न पत्थर हैं न बड़े पेड़? वहाँ के घरों की क्या खासियत होती होगी? मुझे कभी लगता था इग्लू जैसा कुछ होता होगा यहाँ। पर नहीं जनाब! सूझबूझ से बनाए इन घरों की छत समतल और मिट्टी की होती है। वो इसलिए कि जब बारिश इतनी कम होती है तो ढलवा छतें बनाने की क्या ज़रूरत! बर्फ भी इतनी तो नहीं ही गिरती कि कश्मीर के घरों की तरह ढलवाँ छतें बनानी पड़ें। यहाँ दो तरह के बड़े पेड़ होते हैं – पॉप्लर और विलो। पॉप्लर मोटे तने वाला एक लम्बा पेड़ है जबकि विलो की कई शाखाएँ होती हैं। इन दोनों को मिला लो तो छत का अच्छा खासा इन्तज़ाम हो जाता है। पॉप्लर के तनों को लिटाकर उस पर विलो की शाखें डाल दी जाती हैं। इसके ऊपर मिट्टी की कई परतें लेप दी जाती हैं। इन सबको मिलाकर बनी छत बहुत मज़बूत होती है।

ज़रा दीवारों पर आएँ...। दीवारें होती हैं मिट्टी से बनी पक्की ईंटों की। आमतौर पर दीवारें काफी मोटी होती हैं – एक तो, गर्मी को रोके रखने के लिए और दूसरे, भारी भरकम छत को उठाए रखने के लिए। केवल घर ही नहीं बड़े-बड़े महल और मठ भी इसी तरह से बनते हैं। लेह का 1600 में बना 7-8 मंज़िला महल भी इसी तरह बना है। हाँ,

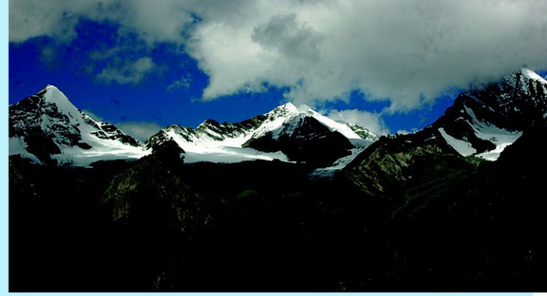

इसका रखरखाव लगातार करना पड़ता है।

घर आमतौर पर दो मंज़िला होते हैं। ऊपर लोगों और नीचे भेड़, याक और डज़ू के लिए जगह होती है। गरमाहट की वजह से रसोई घर का एक बहुत खास हिस्सा होती है।

घर की एक और बेहद ज़रूरी जगह होती है गोदाम। जहाँ सर्दियों के लिए अनाज तथा खाने का दूसरा सामान रखा जाता है। केवल इंसानों के लिए ही नहीं बल्कि मवेशियों के लिए भी चारे आदि का भण्डारण किया जाता है।

सरचु-केलॉग सड़क पर एक विदेशी महिला को अकेले साइकिल चलाते देख मेरे मन में दो बातें आईं। एक, मैं उसके दमखम की दाद दिए बगैर न रह सका। इस ऊँचाई पर जहाँ पैदल चलना भी मुश्किल होता है वहाँ साइकिल चलाना बड़ी हिम्मत का काम है। दूसरा, इस निर्जन इलाके में उसका अकेले साइकिल चलाना बता रहा है कि यह कितनी सुरक्षित जगह है।

थिकसे मठ

साभार - इंटरनेट

सरचु से लेह तक....

लद्दाख जम्मू-कश्मीर का सबसे ऊँचा इलाका है। यह काराकोरम व हिमालय पर्वत मालाओं तथा सिन्धु नदी घाटी के बीच है। ऊँचाई है 3000 से 3650 समुद्र तल से मीटर ऊपर। लद्दाख पर तिब्बत की संस्कृति का इतना प्रभाव है कि इसे छोटा तिब्बत भी कहते हैं। अधिकाँश लद्दाखी बौध धर्म को मानते हैं।

लद्दाख के दो ज़िले हैं – लेह और कारगिल। लेह जाने के दो रास्ते हैं। एक है मनाली से सरचू होते हुए लेह जाना या फिर श्रीनगर, कारगिल होते हुए लेह पहुँचना।

यहाँ के नज़ारे इतने खूबसूरत हैं कि पलक झपकने का भी मन नहीं करता। आँखें कुछ देखने में उलझ जाती हैं और पाँव अपने बल पर ही रास्ता टटोलते हुए बढ़ जाते हैं। उस दिन मैं कैमरे में उन खूबसूरत यादों में समेट ही रहा था कि अचानक तेज़ आवाज़ आई, "भागो!" चट्टान गिरने वाली है। बारिशों के बाद ऐसा होना यहाँ आम है। हम सब ने देखा एक स्थानीय आदमी ज़ोर-ज़ोर से हाथ हिलाकर हमें वहाँ से भाग जाने को कह रहा था। बिना देर किए हमने कैमरे, सामान उठाया और जीप में सवार हो गए।

पाँच दिन बाद हमें वही शख्स मिला। आश्चर्य और खुशी के साथ। बोला, "साब आप लोग ठीक-ठाक हैं। आप इतने दिन तक दिखे नहीं तो हमने सोचा....।" उसी से पता चला कि हमारे जाने के बाद वहाँ बड़ा भारी लैंडस्लाइड हुआ।

1986 में हम अपने दो बच्चों के साथ लेह गए थे। आते वक्त हमें रिज़रवेशन नहीं मिला। लेकिन हमारा आना ज़रूरी था। अब क्या करें? हमने एक ट्रकवाले के सामने अपनी समस्या रखी। उसने कहा कोई बात नहीं जी हम श्रीनगर तक जा ही रहे हैं। आप भी चलें। लेह में सामान पहुँचाने ट्रक आते-रहते हैं। यह ट्रक भी सामान छोड़कर वापस जा रहा था। हम चारों उस पर सवार हो गए। अद्भुत सफर था वो। रात को हम द्रास पहुँचे। द्रास साइबेरिया के बाद एशिया का सबसे ठण्डा रहवासी इलाका है। यहीं हमें रात गुज़ारनी थी। सरदारजी ने ट्रक के पिछले हिस्से में कैनवास बाँध दिया था। हम चारों अपने-अपने स्लीपिंगबैग में घुस गए। सरदारजी के गर्मजोशी से उस रात की ठण्ड का पता ही नहीं चला।

सभी फोटो - पी एम लाड

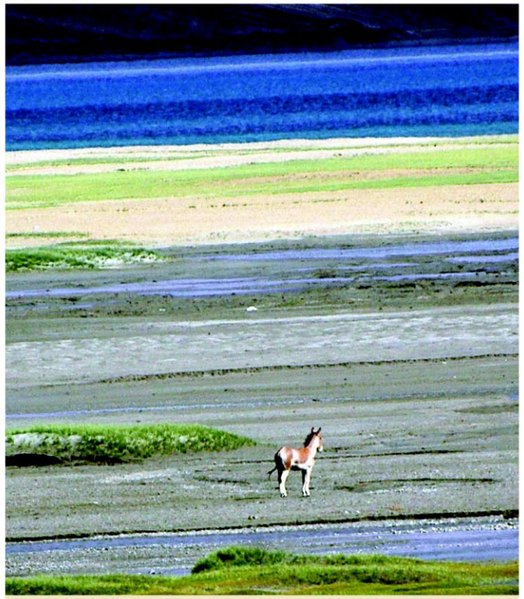

यह है कियांग या तिब्बती जंगली गधा - ये आमतौर पर झुण्ड में रहते हैं। कोई एक कुछ दूर ऊँचाई पर खड़ा रखवाली करता है। खतरा नज़र आते ही सारे के सारे भाग निकलते हैं। दिसम्बर तक इनके फर काफी बढ़ जाते हैं। शायद ठण्ड से बचने के लिए। मई-जून तक ये झड़कर छोटे हो जाते हैं। इनकी देखने और सूँघने की क्षमता काफी ज़्यादा होती है। ये दिनभर चरते रहते हैं और काफी लम्बा समय बिना पानी के रह सकते हैं।